सतीअंजनासुन्दरी

संशोधक

परमपूजनीय पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय सकल-
शास्त्र-सम्राट चारित्र-चूडामणि
श्रीमान् मुनिमहाराज आनन्दविजयजी गणि
के शिष्यरत्न

मुनिराज पद्मविजयजी

प्रकाशक

पण्डित काशीनाथ जैन

२०१ हरिसन रोड

कलकत्ता।

प्रथमावृत्ति १००० [सन् १९२५] मूल्य ॥)

प्रकाशक
वृहद्-वड़ गच्छीय श्रीपूज्य
जैनाचार्य श्रीचन्द्रसिंह सूरि शिष्य
पण्डित काशीनाथ जैन
२०१ हरिसन रोड,
कलकत्ता।

कलकत्ता
२०१, हरिसन रोडके नरसिंह प्रेसमें
पण्डित काशीनाथ जैन
द्वारा मुद्रित

वक्तव्य

भारतवर्षमें सती अञ्जनासुन्दरीका अख्यान घर-घर सुविख्यात है। यह कथा स्त्री और पुरुष दोनोंहीके लिये अनेक अमूल्य उपदेशों से भरी हुई है। इसके जीवनसे बहुत कुछ शिक्षायें प्राप्त हो सकती हैं। यद्यपि पुस्तक बहुत ही छोटी है, किन्तु इसमें वर्तमान समय की स्त्रियोंके जानने योग्य उपयोगी विषयका समावेश खूबही अच्छा किया गया है। आशा है, पाठकगण पढ़कर मेरे परिश्रमको सफल करेंगे।

प्यारे पाठको! आपलोगोंकी सेवामें पनरह पुस्तकें भेंट कर चुका हूँ आज यह सोलहवीं पुस्तक भी आपके कर-कमलोंमें जा रही है आशा है, इसे भी सप्रेम अपना कर मेरे उत्साहको बढ़ायेंगे। अस्तु।

ता० १—१०—१९२५

आपका
काशीनाथ जैन
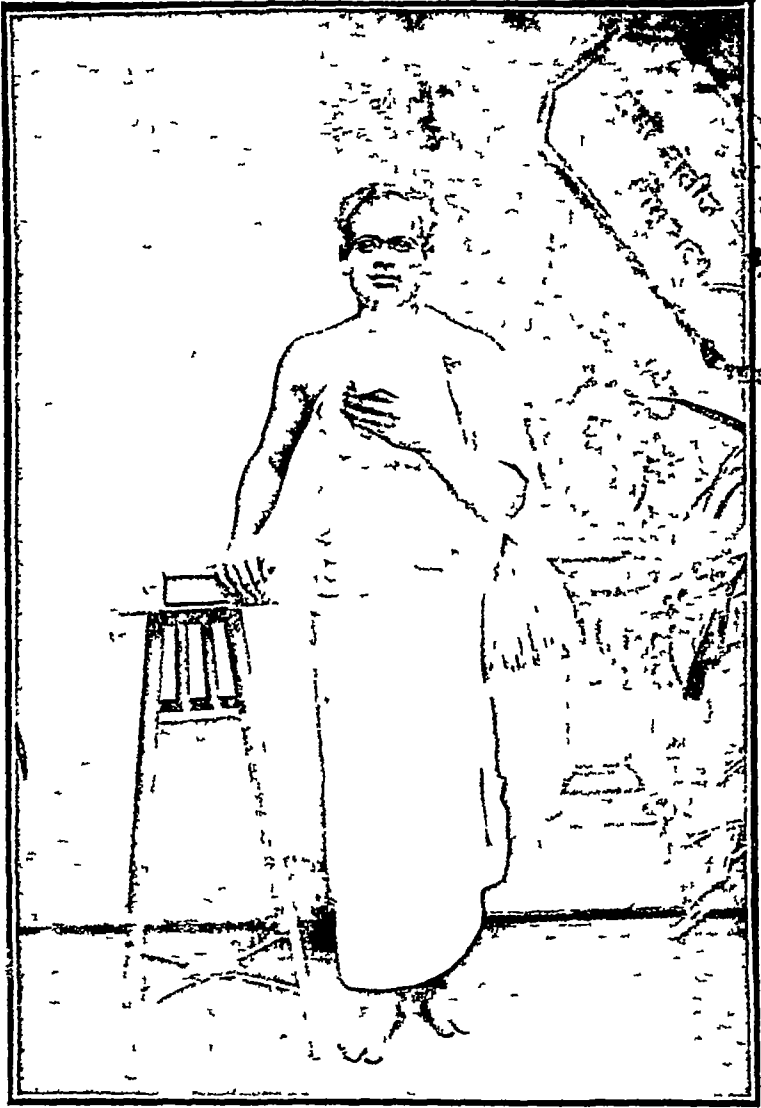
परममाननीय पूज्यपाद् प्रातःस्मरणीय विद्वद्वर्य्य व्याख्यान वाचस्पति
शान्तमूर्ति मुनि-शिरोमणि साहित्यप्रेमी मुनि महाराज
श्रीपन्न्यासजी आनन्दविजयजी गणी

सती अंजनासुन्दरी

बाल्यावस्था और विवाह

इस जम्बुद्वीपमें वैताढ्य नामक एक रमणीय पर्वत है। उस पर्वत पर अपनी पत्नियों सहित सदैव विद्याधर विचरण किया करते हैं। प्राचीन कालमें वहाँ आदित्यपुर नामक एक बड़ाही मनोहर नगर था। उस नगरमें प्रह्लाद नामक एक परम प्रतापी विद्याधर राज करता था। उस राजाकी रानीका नाम पद्मावती था। वह न केवल सद्गुणोंकी ही खानि थी, बल्कि रूप लावण्य और शील स्वभावमें भी अद्वितीय थी। उसने एक ऐसे पुत्रको जन्म दिया, जो जन्मही से महा-बलवान और शक्ति-सम्पन्न था। विद्याधरोंने बड़े आनन्दसे उसका जन्मोत्सव मनाया और उसका नाम पवनंजय रक्खा।

पवनंजय बचपनसे ही बड़ा सुन्दर था, अतः विद्याधरोंका वह दुलारा बन गया। सब विद्याधर नित्य उसके घर जाते और इसे खेलाया करते। जब उसकी अवस्था पाँच वर्षकी हुई,

तव उसे पढ़ानेलिखानेके लिये समुचित प्रबन्ध किया गया · क्यों कि नीति-शास्त्रकारोंका कथन है, कि पुत्रकी अवस्था पाँच वर्षकी होते ही उसे किसी योग्य शिक्षागुरु द्वारा आचार-विचार, नीति-रीति, विद्याकला और धार्मिक एवं व्यवहारिक विपयोंका सम्पूर्ण ज्ञानदिलाकर सन्ततिके ऋणसे मुक्त होना चाहिये।

आज कल प्रायः यही दिखाई देता है, कि ज्योंही लड़केने गिनती पहाडा और हिसाब किताव सीखा, त्योंही उसके माता पिता उसे किसी व्यापार रोजगार या नौकरी चाकरीमें लगा देते हैं। लोग अपनी मातृभापाके अतिरिक्त अंग्रेजी या किसी अन्य भाषाका भी थोडा बहुत ज्ञान प्राप्त करते हैं, परन्तु किसी भाषाका वे सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्तकर उससे पूरा-पूरा लाभ नहीं उठाते। किन्तु इसके लिये बच्चोंको दोष नहीं दिया जा सकता। यह उनके माता पिताका दोष है। वेही अपने हृदयको संकीर्णताके कारण ऐसा करते हैं और इसीलिये बच्चोंको उच्चकोटि की शिक्षासे वञ्चित रहना पड़ता है। इस प्रकारकी अधूरी शिक्षा-दीक्षाके कारण वे मर्यादा रहित, मिजाजी, उध्धत, आलसी, और छिछोरे हो जाते हैं। भारतमें आजकल ऐसेही लोगोंकी संख्या बढ़ती जा रही है और इसीलिये दिन प्रतिदिन इसकी अधोगति हो रही है। जो देश विद्या और कलामें,ज्ञान और विज्ञानमें सब देशोंका शिरमौर समझा जाता था, वही आज परतन्त्र होकर पराया मुँह ताक रहा है। परन्तु इसके लिये हम बच्चोंको दोषी नहीं समझते। निःसन्देह यह उनके माता-

पिताओंका दोष है और उन्हींके कारण बच्चोंको उच्च कोटिकी शिक्षादीक्षा मिलनेमें बाधा पड़ती है।

प्रिय पाठक! इस संसारमें जन्म लेकर प्रत्येक मनुष्यको कभी न कभी सन्तानोत्पत्ति कर माता पिताके पूज्य पदपर अधिष्ठित होनेका अवसर मिलता है। यदि सौभाग्यवश तुम्हे कभी ऐसा अवसर मिले, तो अपनी सन्तानको विद्या, कला, नीति, धर्म एवं व्यवहार आदि विषयोंकी सम्पूर्ण शिक्षा देनेसे कदापि मुँह न मोड़ना। इससे भारतका लुप्त गौरव पुनः प्राप्त होगा और आप यशभागी होंगे।

प्रह्लादने अपने पुत्र पवनंजयको सभी विषयोंकी यथेष्ट शिक्षा दिलायी और इसीलिये पवनंजय ससारमें कठिनसे कठिन कार्य सफलता पूर्वक कर सके। यदि उन्हें वैसी शिक्षा न मिली होती तो न वे वैसे कार्यही कर सकते, न उन्हें वैसी नामनाही मिलती। उनके जीवनकी निम्न लिखित घटनाओंको पढ़कर हमारे पाठकोंको हमारे कथनपर विश्वास होगा और वे उच्च एवं सम्पूर्ण शिक्षाका महत्व और उसकी आवश्यकता स्वीकार करेंगे—अस्तु।

राजा प्रहलादने जब देखा, कि पवनजय सभी विद्या कला और शास्त्रोंमें पारंगत हो चुका है और अपनी गृहस्थी अच्छी तरहसे चला सकता है, तब उन्होंने उसके व्याहका आयोजन किया। उन दिनों माहेन्द्रपुरमें माहेन्द्र नामक राजा राज करता था। उसकी रानीका नाम हृदयसुन्दरी और कन्याका नाम

अंजना सुन्दरी था। अंजना सुन्दरी अपने रूप लावण्य और शीलस्वभाव एवं गुणोंके कारण सुप्रसिद्ध थी। प्रह्लादने उसे पवनंजयके लिये योग्य वधू समझ कर, इसीके साथ उसका व्याह कर दिया। विवाह कार्य बडी धूमधाम और आनन्दके साथ सम्पन्न किया गया।

प्रिय पाठक! पुत्र और पुत्रीका विवाह उसी समय करना चाहिये, जब वे पढ़ लिख कर चतुर हो जायँ। यदि वे दाम्पत्य-जीवनकी जिम्मेदारी न समझते हों और उन्हें अपने कर्त्तव्यका ज्ञान न हो, तो उनका विवाह कदापि न करना चाहिये। योग्य अवस्थामें योग्य पात्रके साथ पुत्र और कन्याका विवाह करनेपर वे निर्विघ्न रूपसे आनन्द पूर्वक अपनी जीवन यात्रा सम्पन्न करनेमें समर्थ होते हैं।

आजकल लड़के लड़कियोंका विवाह बहुतही छोटी अवस्थामें किया जाता है। कहीं-कहीं तो इतनी छोटी अवस्थामें व्याह किया जाता है, कि उन दुधमुँहे बच्चोंको यह भी ज्ञान नहीं होता, कि विवाह किसे कहते हैं। ऐसे बच्चोंका विवाहके नाम पर गला घोटकर माता पिता आनन्द मनाते हैं, परन्तु वास्तवमें इससे बढ़कर हानिजनक प्रथा और नहीं है। बाल विवाहने हमारी विद्याकला और शारीरिक सम्पत्ति नष्ट कर दी है। इसीके कारण दिन प्रतिदिन हमारी सन्तान दीन हीन, दुर्बल, अल्पायु, रोगी और उत्साह रहित होती चली जा रही है और ऐसी ही सन्तानके कारण भारत परमुखापेक्षी हो रहा है और होता जा

रहा है। बालविवाहके कारण बच्चोंका विद्याध्ययन अधूरा ही रह जाता है और उन्हें अपनी जीविकाके लिये घर-घर भटकना पडता है। बाल-विवाहके प्रतापसे पति पत्नीमें मनोमालिन्य बना रहता है और उन्हें उसी अवस्थामें अपनी जीवनयात्रा किसी तरह पूरी करनी पडती है। बाल-विवाहके कारण स्त्रियोंको असमयमें ही पति सहवासके लिये बाध्य होना पड़ता है, फलत अनेक बार उन्हे वन्ध्यत्व भोग करना पड़ता है। यदि ऐसी स्त्रियाँ किसी सन्तानको जन्म देती हैं, तो वह भी दीनहीन, दुर्बलेन्द्रिय, रोगी और अल्पायु होती है। इस लिये पुत्र पुत्री जब अच्छी तरह पढ़ लिख कर, घर गृहस्थी चलाने योग्य हों, तभी उनका विवाह करना चाहिये, अन्यथा वह सुखके बदले उनके दुखही का कारण होता है।

प्रवीण पवनंजयकी विवाहिता पत्नी अंजना सुन्दरी यद्यपि रूपगुण और पतिदेवकी इच्छानुसार आचरण करनेमें बहुत ही प्रशंसनीय थी; परन्तु न जाने किस पूर्व कर्मके योगसे पवनंजयको उस पर कुछ संदेह होगया और वे विना कुछ सोचे या जाँच किये ही उससे दूर रहने लगे। यहाँ तक कि उन्होंने उससे बोलना भी छोड़ दिया।

अञ्जना सुन्दरीने जब अपने पतिको असन्तुष्ट देखा, तब उसने बहुत कुछ सोचा विचारा, किन्तु उसे इसका कारण न समझ पडा। फलतः वह बहुत घबड़ाने और चिन्ता करने लगी। समझदार स्त्रियोंके लिये, पतिकी अप्रसन्नतासे बढ़कर दूसरी

शिक्षा नहीं। इसीलिये अंजना सुन्दरी व्याकुल हो रही थी, परन्तु क्या करे? पति उसे एकान्तमें मिलते न थे और विना एकान्तके उनका भ्रम दूर करना असम्भव था। कुलवती स्त्रियोंके लिये हमारे देशमें यही नियम था कि वे दिनभर घरका काम करती थीं और रातमें जब शयनगृहमें जाती थी तब अपने पतिदेवके दर्शन प्राप्तकर अपनेको धन्य समझती थीं। आजकलकी तरह प्राचीन कालमें पति पत्नी जब चाहे तब एक दूसरेसे मिलने, देखने या सम्भाषण करनेमें अपना अहोभाग्य न समझते थे। उन्हें सर्वकाल गुरुजनोंकी मर्यादा और लोक-लाजका ख़याल रखना पड़ता था। इसीलिये अंजना सुन्दरीको पतिदेवके भ्रमनिवारण करनेका अवसर न मिला। इसके लिये उसे बडा सन्ताप होता था और वह बहुत उदास बनी रहती थी, परन्तु यह दुःख ऐसा भी न था, जो किसीसे कहा जा सके।

अञ्जना सुन्दरी आजकलकी मूर्खा स्त्रियोंके समान अज्ञान न थी, कि अपनी सखी सहेली या अडोसपडोसकी स्त्रियोंसे पतिके दुर्व्यवहारकी आलोचना कर उनकी नजरसे गिर जाय। किसीके सामने दुखडा रोनेसे दुःख दूर नहीं होता। जो स्त्रियाँ ऐसा करती हैं उन्हें अपने कृतकर्मके लिये अवश्य पश्चाताप करना पड़ता है, क्योंकि जब उनके पति यह बात सुनते हैं तब वे और अधिक चिढते हैं और इससे उनका दुःख दूर होनेके बदले उलटा बढ़ जाता है। अशुभकर्मके उदयसे आये हुए दुःखको शुभकर्मके उदय हुए विना कौन मिटा सकता है? कोई नहीं!

तो फिर अपने रहस्यको—अपने हृदयकी बातको दूसरोंसे कहकर क्यों नाहक अपनी हँसी करानी चाहिये ? प्रिय पाठक और पाठिकाओ ! यदि तुम्हे कोई दुःख हो, तो उसे इधर उधर कहते न फिरो, उसे अपनी जबान पर भी न लाओ। उसे अपने मनमें रखकर परमात्माका स्मरण करो ताकि दुःख दूर होकर आनन्दकी वृद्धि हो।

संयोग और वियोग

"सबै दिन नाहिं बराबर जात।" संसारमें अनादिकालसे यही नियम प्रचलित है। न आजीवन सुखही रहता है न दुःख ही। जिस तरह दिनके बाद रात और रातके बाद फिर दिन होता है, उसी तरह शुभाशुभ कर्मके कारण सुखके बाद दुःख और दुःखके बाद सुखकी प्राप्ति होती है। यह प्रकृतिका अटल नियम है। अंजना सुन्दरीका दुःखभी इस नियमके रहते हुए चिरस्थायी कैसे हो सकता ? अब तक उसने दाम्पत्य-जीवनके सुखोंका रसास्वादन करना तो दूर रहा, अपने पतिको जी भरकर देखा भी न था। यद्यपि अब उसके सुखके दिन समीप आते जा रहे थे, तथापि अभी बहुत दूर थे। जब तक दुःखकी अवधि पूरी नहीं होती, तब तक मनुष्यको सुख नहीं मिलता। अभी अंजना सुन्दरीके दुर्दिन पूरे न हुए थे। अभी पति-संयोग का सुख अनु-

भव करनेके पहले, उसे वियोग-ज्वालामें जलना बाकी था। अभी उसके सुखी होनेमें कुछ दिनोंकी देर थी।

पवनजय अंजना सुन्दरीसे असंतुष्ट थे और अञ्जना सुन्दरी इसके लिये सदैव उदास बनी रहती थी। इसी अवस्थामें दिन पर दिन बीतते चले जा रहे थे। न जाने इस तरह कितना समय निकल जाता, परन्तु बीचमें एक ऐसी घटना घटित हुई कि जिससे दोनोंकी जीवन-धारा पलट गयी।

बात यह हुई, कि वरुण और राक्षसेन्द्र रावणमें किसी कारण वश लड़ाई छिड़ गयी। पवनंजयके पिता रावणके बड़े मित्र थे अतः रावणने उनके पास दूत भेजकर सब हाल कहला या और उन्हें अपनी सहायतार्थ बुला भेजा।

रावणकी ओरसे रण निमन्त्रण मिलतेही राजा प्रह्लादने अपने सैन्यको सुसज्जित होनेकी आज्ञा दी। जब यह बात वीर-मणि पवनंजयने सुनी, तब वे पिताके पास गये और हाथ जोड़-कर कहने लगे "हे पिताजी! समरस्थलीमें विचरण करनेके लिये मैं जब तक प्रस्तुत हूँ, तब तक स्वयं आपको रण-यात्रा न करनी चाहिये। राजनीतिमें इसका निषेध किया गया है। इसलिये आप अपनी यात्रा स्थगित कर मुझे आज्ञा दीजिये, कि मैं शत्रुको परास्तकर शीघ्रही वापस लौट आऊँ।"

अपने वीरपुत्रकी विनय और नीतियुक्त यह बात सुन कर, प्रह्लादने उसे रण-यात्राके लिये सहर्ष आज्ञा दे दी। पवनंजय पिताको प्रणाम कर माताकी आज्ञा प्राप्त करनेके लिये अन्तः-

पुरमें गये। वहाँ उन्होंने अपनी माताको श्रद्धापूर्वक प्रणाम कर सारा हाल कह सुनाया और उनसे भी उसी तरह नम्रता पूर्वक रण-यात्राके लिये आज्ञा मागी। वीर जननीने वात्सल्य जनित व्याकुलताको छिपा कर शांन्ति पूर्वक उन्हें शुभाशीश दे, युद्धके लिये विदा किया।

प्रिय पाठक! पुत्रका यह कर्त्तव्य होना चाहिये, कि वह अपने पिताका समस्त कार्य-भार अपने शिर पर उठा ले। इतनाही नहीं, उसे अपने माता पिताके प्रति भक्ति, श्रद्धा और विनय भी दिखाते रहना चाहिये। इससे माता पिताको आनन्द होता है और पुत्र अपने पितृऋणसे मुक्त होता है। पढ़लिख कर बड़े होने पर माता पिताका जी जलाना-बहुतही बुरा और निन्दनीय है। इसी तरह माता पिताको भी चाहियें, कि यदि पुत्र नीतिवान और विवेकी हो, तो उसके लिये अपनेको धन्य समझें और सदैव ऐसा आचरण करें, जिससे उसकी उत्तरोत्तर उन्नति होती रहे। माता पिता और गुरुजनोंको अपने पुत्र और शिष्य द्वारा पराजित होनेमें ही अपना गौरव समझना चाहिये, क्यों कि अपना पुत्र किंवा शिष्य अपनेसे अधिक विद्वान और गुणवान हो यह परम वाञ्छनीय है।

जिस समय पवनंजय अपनी माताके पास गये, उस समय अञ्जना सुन्दरी भी वहाँ उपस्थित थी। उसने पतिदेवको देखते ही नम्रतापूर्वक उनके चरणोंमें प्रणाम किया, किन्तु पवनंजय उसकी उपेक्षा कर वहाँसे चल पड़े। अञ्जना सुन्दरीके प्रति

पुत्रका यह व्यवहार देखकर माता समझ गयी, कि इन दोनोंमें अवश्य मनोमालिन्य है,. परन्तु उस समय कुछ कहने सुननेका मौका न था, अतः उसने भी इस घटनाकी उपेक्षा की। इससे अञ्जना सुन्दरीका दुःख दूना हो गया, क्यों कि अब तक जो बात छिपी हुई थी, वह दो कानसे चार कानोंमें पहुँच गयी। कोई भी बात या रहस्य उसी समय तक छिपा रहता है जब तक वह दूसरेके कानों तक नहीं पहुँचता। दूसरेके कानमें पहुँचतेही फिर उसे प्रकट होते देर नहीं लगती। अञ्जना सुन्दरीको भी अब यह चिन्ता होने लगी, कि अब तक बड़े यत्नसे अपना जी जला-जला कर जो बात मैंने छिपा रक्खी थी, वह प्रकट हो जायगी और लोग मुझे निरपराध होने परभी शायद अपराधिनी समझने लगेंगे।

खैर, पवनंजय अपने एक मित्रके साथ सैन्य सहित रण-यात्राके लिये प्रस्तुत हुए वे आकाशगामिनी विद्यामें भली भाँति पारङ्गत थे, अतः आकाशमार्गमें पवन वेगसे उड़ने लगे और स्वल्पकालमें ही अपनी नगरीसे सैकड़ों कोस पर स्थित एक सुन्दर सरोवरके निकट जा पहुँचे। वह स्थान बहुत ही रमणीय और विश्राम करने योग्य प्रतीत हुआ, अतः पवनंजयने एक दिन वहाँ पड़ाव डालनेका विचार किया। सरोवरके चारों ओर, वृक्षोंकी घनी घटामें तुरन्त तम्बू और डेरे खड़े कर दिये गये और सब लोग आनन्द पूर्वक विश्राम करने लगे।

प्रिय पाठक! अञ्जना सुन्दरीके सौभाग्यसे यहाँ एक ऐसी
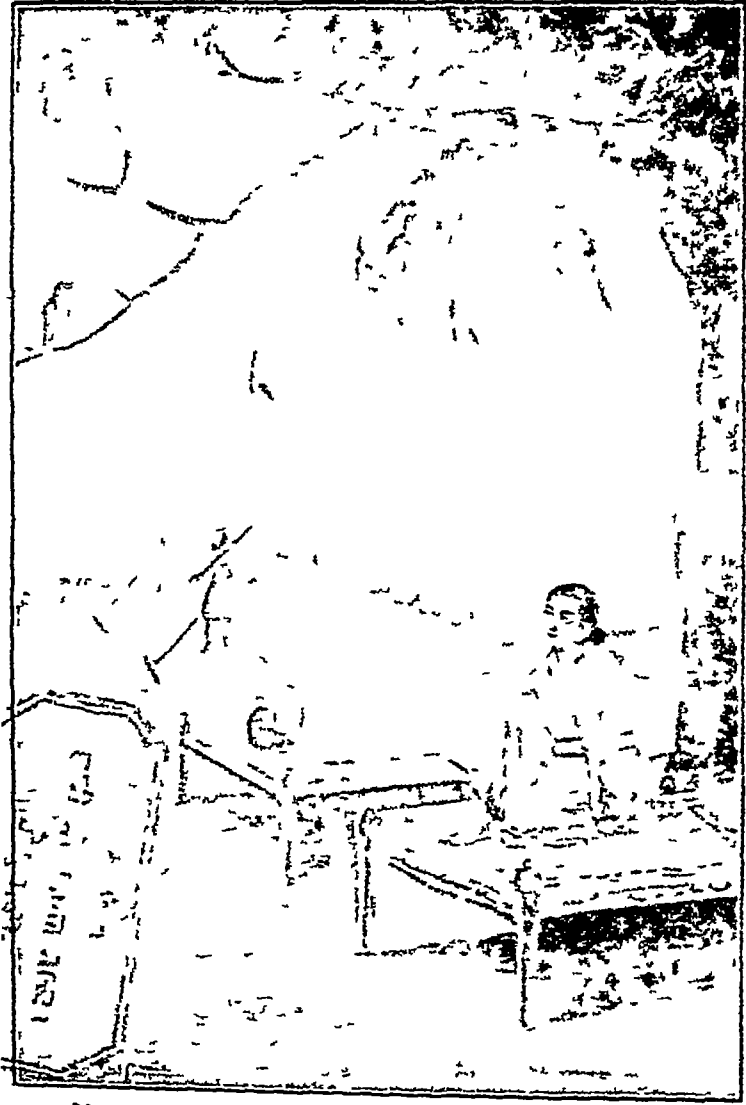
वह मेरे दीर्घकालके वियोगमें न जाने कितनी व्याकुल हो रही होगी?

(पृष्ठ ११)

घटना घटित हुई कि जिसने पवनंजयकी चित्तवृत्तिको एकदमही पलट दिया। बात यह हुई, कि जिस वृक्षके नीचे पवनंजयका डेरा था, उस वृक्ष पर चकई चकवाका एक जोडा रहता था। उस दिन चकवा अपनी प्रियतमाको छोड़कर न जाने कहाँ चला गया था, इससे चकई बडाही करुण क्रन्दन कर रही थी। पवनंजय पशु-पक्षियोंकी भाषाभी जानते थे अत. चकईका विलाप सुनतेही उनके हृदय पर ऐसा प्रभाव पडा कि एक नवीन विचारके कारण वे उन्मत्तसे हो गये।

पवनंजय अपने मनमें कहने लगे कि यह चकवाकी, जो कि एक पक्षी है, अपने प्रियतमके केवल एकही दिनके वियोगसे जब इतनी व्याकुल हो रही है और इस प्रकार विलाप कर रही है, तब मेरी स्त्री, जो कि एक राजकुमारी है, वह मेरे दीर्घकालके वियोगसे न जाने कितनी व्याकुल हो रही होगी? हा! मैं न जाने कैसा मूर्ख हूँ, कि मैंने अपने भ्रमको निवारण करनेकी कोई चेष्टा न कर उस भोले हृदयकी सुन्दरीको प्राय: त्यागही दिया! विवाहके समय मैंने हजारो मनुष्योंके सन्मुख उसका पाणिग्रहण करते समय प्रतिज्ञा की थी, कि आजसे मैं तेरा और तू मेरी है। मैं तेरे सुखसे सुखी और दुःखसे दुःखी बनूँगा। मैं सदा तेरी सम्मतिसे कार्य करूँगा और निरन्तर तेरे गृहकी शोभा बढ़ाऊँगा, परन्तु उन सब प्रतिज्ञाओंको ताक पर रख, मैं विरुद्धाचरण द्वारा उसे कष्ट दे रहा हूँ। निःसन्देह मैंने उसके साथ यह विश्वासघात किया है। मैं हो तो उसके

जीवनका अवलम्ब, उसकी आशाओंका स्थान और उसका एक-मात्र आधार हूँ। मेरे सिवा उसे कोई दिलासा देनेवाला भी तो नहीं है? वह मेरे पर सदा प्रेमभाव रखती थी और मैं उसका तिरस्कार करता था। मेरी इस नादानीसे मेरा कुलभी कलङ्कित हो सकता है। मै शरणागतको भी शरण न दे सका। यह मेरे लिये बडीही लज्जाकी बात है। खैर, जो हुआ सो हुआ। अब भी कुछ नहीं बिगड़ा। मनुष्यमात्रसे भूल होती है. परन्तु भूलको सुधारनाही मनुष्यत्व है।"

इस तरहके अनेकानेक विचारोंके कारण पवनंजयका हृदय आन्दोलित हो उठा। उन्हें पिछली बातोंके लिये बड़ा पश्चाताप हुआ और वे उसी समय अपनी प्रियतमाको हृदयसे लगानेके लिये उत्कण्ठित हो उठे। उन्होंने तुरन्त अपने मित्रको जगाकर उससे सारा हाल कहनेका विचार किया, परन्तु जगानेके बाद संकोचवश वे अधिक बातें न कह सके। उन्होंने केवल चकईकी ओर उसका ध्यान आकर्षित कर उसे सारा हाल कह सुनाया और बोले कि इस वियोगिनी चकईके विलापसे मेरा हृदय विदीर्ण हुआ जा रहा है।"

वह मनुष्य पवनंजयका अभिन्न हृदय मित्र था। उससे पवनंजयकी कोई बात छिपी न थी। पति पत्नीके मनोमालिन्यकी बात भी उसे कुछ-कुछ मालूम थी, अतः यह अवसर मिलतेही वह पवनंजयको खरी-खरी सुनाने लगा। उसने कहा भाई! सब लोग तुम्हारेही समान कठोर हृदयके नहीं होते, कि

अकारण ही आपसमें अनवन बनाये रक्खें। न जाने तुम अपनी गृहिणीसे क्यों दूर-ही-दूर रहा करते हो? मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि तुम अपना कोई शारीरिक दोष छिपानेके लियेही ऐसा करते हो। देखो, विचारे पक्षी भी एक दूसरेसे कैसा नि-निष्कपट व्यवहार रखते हैं, कि उन्हें एक दूसरेका वियोग असह्य हो पड़ता है? परन्तु तुम्हारे हृदयपर तो इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। न जाने परमात्माने तुम्हारा हृदय किस चीज़का बनाया है, जो किसी तरह पसीजता ही नहीं।

पवनंजयका मित्र अभी न जाने और क्या-क्या कहने जा रहा था, परन्तु पवनंजयसे अब न रहा गया। वे बीचहीमें बोल उठे—भाई बस करो! तुम्हारी बातें अब मुझसे सुनी नहीं जातीं। अपनी मूर्खता और कृतकर्मोंके लिये मुझे आपही पश्चात्ताप हो रहा है। मैं ने निःसन्देह अपनी गृह देवीको धोखा दिया है और इसके लिये मुझे उसके निकट क्षमा प्रार्थना करनी चाहिये। हम लोग रणक्षेत्रको जा रहे हैं। न जाने वहाँसे लौटें या न लौटें। इसलिये यदि तुम कहो, तो मैं इसी समय घर चला जाऊँ और उसे एकबार मिलकर अपना यह सन्ताप दूर कर आऊँ। मैं रात ही रात जाकर वापस आ सकता हूं।

मित्रने कहा—भला, इससे अधिक आनन्दकी बात और क्या हो सकती है? तुम इसी समय सानन्द जा सकते हो। मुझे इससे बड़ाही आनन्द होगा। मैं सुबह तक यहीं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा।

प्रिय पाठक! जो मनुष्य समझदार और विद्वान् होता है,

वह यदि कर्मवश अपने कर्त्तव्य-पथसे विचलित भी हो जाता है, तो वह ज्योंही किसी मित्र किंवा हितचिन्तक द्वारा हित-शिक्षा सुनता है, त्योंही उसे अपने कर्त्तव्यका ज्ञान हो जाता है और वह अपने कृतकर्मके लिये पश्चाताप करने लगता है।

देखिये, पवनंजयके मित्रने भी कैसे प्रभावोत्पादक शब्दोंमें पवनंजयको उपदेश दिया। भले मित्रोंका यही कर्त्तव्य है कि वे अपने मित्रको कुपथमें जानेसे रोकते हैं, और जो कुपथ गामी हो जाते हैं, उन्हें युक्तिसे फिर ठिकाने लाते हैं। वे सदा ऐसीही बातें सोचते व ऐसेही काम करते हैं, जिससे मित्रका कल्याण हो। वे अपने मनकी बात अपने मित्रसे कहते हैं और मित्रको बात आप सुनते हैं। यदि अपने मित्रमें उन्हें कोई दुर्गुण दिखायी देता है तो वे उसे दूर करनेकी चेष्टा करते हैं और उसके गुणोंको प्रकाशितकर उसकी पीठ पीछे प्रशंसा करते हैं। यदि मित्रपर कोई विपत्ति आती है, तो वह आवश्यक सहायता और सान्त्वना देते हैं। जो लोग ऐसा नहीं करते और केवल अपने स्वार्थहीके लिये दूसरेसे मित्रता करते हैं वे सन्मित्र नहीं कहे जा सकते। किसीसे मित्रता करनेके पहले लोगोंको चाहिये, कि वे इन सब बातोंपर विचार कर लें और वह मित्रता करने योग्य है या नहीं—इसका निर्णय करनेके बाद उससे मित्रता करे। ऐसाही करनेसे पवनंजयके मित्रके समान मित्र मिलते हैं, जो दुःखमें सान्त्वना और धैर्य देकर मित्रको शुभ कार्योंके लिये सदैव उत्साहित किया करते हैं।

मित्रको अनुमति मिलतेही पवनंजय अन्तरिक्षगामिनी विद्याके प्रभावसे क्षणमात्रमें अपनी प्रियतमाके महलमें जा पहुँचे। महलमें पहुँचकर वे अपने शयनागारमें गये और किवाड़ोंकी दराजसे अन्दर देखने लगे। उन्होंने देखा कि वियोगिनी अंजना सुन्दरी योगिनकी तरह केश-कलाप खोले हुए, बिलकुल सादे कपड़ोंमें, जमीनपर बैठी हुई नेत्रोंसे अविरल जल-धारा बहा रही है। विरह वेदनाके कारण उसका चेहरा पीला पड़ गया था। पवनंजयने देखा कि वह भीजे हुए नील-कमल जैसे नेत्रोंसे बारम्बार ऊपरकी ओर देखती है और अपनी दुरवस्थाके लिये दैवको दोष देती है। ध्यान देनेपर पवनजयको उसके यह शब्द स्पष्ट सुनायी दिये :—

"हा दुर्दैव! क्या तू इसी अवस्थामें मेरे जीवनका अन्त लाना चाहता है? क्या किसीको सुखी देखकर तुझे दुःख होता है? यदि नहीं, तो फिर इतनी निर्दयतासे इतना कठोर शासन करनेकी क्या आवश्यकता है? मेरे पतिदेव तो निष्ठुर और कठोर हृदयके थे ही नहीं। तूनेही प्रपञ्च जालकी रचना कर उन्हें ऐसा बना दिया है। हाय! तूनेही मेरा जीवन दुःखमय बना रक्खा है। मैं अपनी इस दुरवस्थाके लिये और किसीको दोष नहीं दे सकती। पतिदेवने विवाहके समय पाणिग्रहण करनेके बाद फिर एकबार भी मेरा हाथ नहीं पकड़ा! न जाने मेरी क्या गति होगी? मैं अपना यह दुःख किससे कहूँ? जब विधाताही वाम हो गया है तो किससे फरियाद करूँ?......

इस तरह प्रलाप करनेके बाद् अंजना सुन्दरी कुछ देरके लिये चुप हो गयी। उसके नेत्रोंसे मोतियोंकी लड़ीके समान अश्रु-धारा निकलने लगी। कुछ काल तक यही अवस्था रहनेके बाद् उसका चित्त कुछ शान्त हुआ। किसीने सच कहा है, कि रोनेसे हृदयका भार हलका हो जाया करता है। अंजनासुन्द-रीका हृदय जब कुछ हलका हुआ, तब उसे अपनी अवस्थाका ज्ञान हुआ। वह अपनी उपरोक्त बातोंका स्मरण कर कहने लगी—हा! मैं यह क्या बक रही हूँ? बिचारे दैवका क्या दोष? मनुष्यको अपने कर्मानुसारही सुख किंवा दुःख मिलता है। मैंने पूर्व जन्ममें जो कर्म किये हैं, उसका फल भोग किये बिना सुख कैसे मिल सकता है? इसलिये दैवको दोष देना व्यर्थ है। अपनी इस दुरवस्थाके लिये अपने कर्मोंकोही दोष देना चाहिये। हे कर्म! तू बड़ाही घातकी है। तुझे मुझ जैसी अभागिनी अबला पर अत्याचार करनेमे लज्जा नहीं आती!

इसी तरह भ्रमितकी भाँति प्रलापकर अंजना सुन्दरीको अपना हृदय हलका करते देख पवनंजयका हृदय द्रवित हो उठा। उससे अब उस स्थानमें खड़ा न रहा गया। उसने तुरन्त अपनी प्रियतमाको पुकारकर किवाड़ खोलनेको कहा। अंजना सुन्दरी मध्य रात्रिके समय अचानक किसीको पुकारते देख चौंक पड़ी। परन्तु पुकारनेवालेका कण्ठ कुछ परिचित और पतिदेवके सदृश मालूम होनेसे, वह विस्मत हो कहने लगी—क्या वास्तवमें मुझे पतिदेव पुकार रहे हैं या मुझे उनकी भ्रान्ति हो रही है? यदि

में इसे सत्य मान लूं तो यह असम्भव है, क्यों कि पतिदेव तो आज ही रणभूमिकी ओर गये हैं। विना विजय प्राप्त किये वे वहाँसे लौटही कैसे सकते हैं? और यदि मैं यह मान लूँ कि वास्तवमें वही आये हैं, तब भी उनका यहाँ आना असम्भव ही मालूम होता है, क्यों कि मुझ जैसी मन्दभागिनीका ऐसा भाग्य कहाँ, कि वे मेरे महलमें पदार्पण करें!"

जिस समय अंजना सुन्दरी इस तरहके तर्क-वितर्क करनेमें निमग्न थी, उसी समय उसकी बाईं आँख फड़क उठी। यह शुभ सूचक लक्षण देखते ही अंजना सुन्दरीके हृदयमें आनन्दका संचार हुआ। वह कुछ आशावती हो कहने लगी—संसारके जब समस्त पदार्थ क्षण भंगुर और नाशवन्त हैं, तब इस वियोगका नाश क्यों नहीं हो सकता। संभव है कि वियोगकी अवधि-पूरी हो गयी हो और शुभ कर्मोदयके योगसे प्राणनाथके मिलनकी घड़ी समीप आ पहुँची हो। मेरा अन्तरात्मा भी यही कह रहा है अतः मैं समझती हूँ कि आज मुझे पतिदर्शनका लाभ अवश्य मिलेगा।

इतनेहीमें पवनजयने फिर उसे पुकारा। इसबार अंजना सुन्दरीका भ्रम दूर हो गया। उसने अपने पतिदेवकी आवाज पहचान लीं। उसका हृदय आनन्दसे भर गया। आनन्दके कारण मत्त मयूरकी तरह उसका मन थिरक-थिरककर नाचने लगा। उसने तुरन्त किंवाड़े खोलकर नम्रता पूर्वक पतिदेवके चरणोंमें प्रणाम किया और उन्हें बडी श्रद्धा व आदरके साथ अन्दर लाकर एक उच्च आसनपर बैठाया।

अंजना सुन्दरीकी यह श्रद्धा व भक्ति देखकर पवनंजयका हृदय पुलकित हो उठा। उन्होंने बड़े प्रेमसे उसे गले लगाया और अपने दुर्व्यवहारके लिये पश्चाताप किया। साथही उन्होंने नाना प्रकारके मधुर वचनों द्वारा उसे सान्त्वना दी और यह विश्वास दिलाया कि भविष्यमें अब वे ऐसा निष्ठुर व्यवहार कदापि न करेंगे।

अंजना सुन्दरी अपने पतिदेवके चरणोंके पास बैठी हुई आँसू बहा रही थी। यद्यपि उसके जीवनमें इससे बढ़कर शायदही सुखकी और घड़ी आई होगी, फिर भी इस समय क्या करना या कहना चाहिये—यह उसे सूझ न पड़ता था। एकाएक अत्यन्त सुख या अत्यन्त दुःख आ पड़नेपर मनुष्यकी ऐसी ही अवस्था होजाती है।

पवनंजयने अंजना सुन्दरीको पुनः गले लगाया और अपने पास बैठाकर नाना प्रकारके मनोरञ्जन तथा हास्य विनोद द्वारा उसका सारा दुःख दूर कर दिया। अंजना सुन्दरीने भी दैवयोगसे मिले हुए स्वर्ण सुयोगको व्यर्थ न खोकर, पतिदेवको यथासाध्य सन्तुष्ट करनेकी चेष्टा की। फलतः दोनोंका मनोमालिन्य दूर हो गया, उन्होंने दाम्पत्य जीवनका वह स्वर्गीय सुख अनुभव किया जिसे उन्होंने अब तक कभी अनुभव न किया था और जिसका वर्णन करना हमारे लिये असम्भव है।

प्यारी बहनो! पतिने चाहे जितना कष्ट दिया हो, और चाहे जितना परेशान किया हो, फिर भी कुलवती स्त्रियोंका यही धर्म है, कि उसपर ध्यान न दे, पतिके दर्शन होतेही उसकी

इच्छानुसार आचरण कर उसकी कृपा सम्पादन करे। जो स्त्रियाँ ऐसे समयपर पूर्व घटनाओंको स्मरणकर पतिसे कलह करती हैं, उनकी न केवल बदनामी ही होती है, बल्कि अपने सुखको जान बूझकर ठुकरानेके कारण उन्हें भविष्यमें पश्चाताप भी करना पड़ता है। स्त्रियोंको चाहिये, कि वे सदैव पतिके अनुकूल आचरण करें। इसीसे कुलकी शोभा बढ़ती है और इसीसे इहलोक तथा परलोकमें सुखकी प्राप्ति होती है। पतिसेवा ही स्त्रियोंका सच्चा भूषण है। सोना चाँदी और हीरा मोतीके जड़ाऊ गहनोंकी अपेक्षा स्त्रियोंके लिये लज्जा और पतिपराय-णता आदि भूषणोंकी अधिक आवश्यकता है। यह सोने चाँदीके गहनोंकी अपेक्षा अधिक मूल्यवान होते हैं। पतिपत्नीके सम्बन्धसे बढ़कर संसारमें और नाता या रिश्ता नहीं है। जो स्त्रियाँ इसे बराबर निबाह ले जाती हैं, उनका नाम संसारमे अमर हो जाता है। पतिही स्त्रियोंका पूज्य और आराध्य देव है। सुशील स्त्रियोंको चाहिये, कि वे देव दर्शनके लिये इधर-उधर न भटककर, अपने पतिके ही दर्शन करें, उसीकी सेवा पूजा और आराधना करें। यही उनका सच्चा धर्म और यही उनका कर्त्तव्य है, परन्तु दुर्भाग्यवश आजकल कोई इन बातोंपर ध्यान नहीं देता। इसका फल यह होता है, कि किसी रम-णीको महासतीका पद—वह पद कि जिसके सामने संसारका सब ऐश्वर्य और स्वर्गके समस्त सुख किसी विसातमें नहीं है—उपलब्ध नहीं होता। यही कारण है कि कवि और पण्डित-

गण आज भारतीय महिलाओंका गुणगान नहीं करते । जिस दिन स्त्रियाँ अपना यह कर्त्तव्य समझने लगेंगी, उसीदिन वे उच्च पदकी अधिकारिणी होंगी और इस मृत्युलोकके मनुष्य तो क्या स्वर्गलोकके देवता भी उनका गुणगान करनेमें अपना अहोभाग्य समझने लगेंगे ।

प्रिय पाठक ! आज पवनंजय और अंजना सुन्दरीके वियोगका अन्त आनेके कारण, उनके हृदयमें आनन्दका समुद्र उमड़ आया, फलतः चार पहरकी रात्रि चार क्षणकी तरह देखते ही देखते बीत गयी । जब सवेरा हो चला, तब पवनंजय चलनेको तैयार हुए । उन्हें विदा माँगते देख अंजना सुन्दरीका मुँह सूख गया और वह बहुत उदास हो गयी । परन्तु पवनंजयका जाना अनिवार्य था अतः उसने उन्हें रोकना भी उचित न समझा । उसने कहा प्राणनाथ ! आपके गये विना काम नहीं चल सकता, इसी लिये मैं लाचार हूँ, कैसे कहूँ कि आप न जायँ । ऐसे वक्तपर आपको रोक रखना मैं उचित भी नहीं समझती । आप सानन्द जाइये और शीघ्रही विजयलक्ष्मी प्राप्त कर वापस आइये ; परन्तु मैं आपसे कुछ कहना चाहती हूँ ।

पवनंजयने कहा,—"प्रिये ! शीघ्र कहो । मैं तुम्हारी बात अवश्य सुनूँगा ।

अञ्जना सुन्दरीने कुछ संकुचित हो जमीनकी ओर देखते हुए कहा—मैं ऋतुमती हूँ । मुझे मालूम होता है कि आज मुझे गर्भ रह गया है । आज आठवाँ दिन है अतः अवश्य प्रतापी

अजनासुन्दरीकी यह युक्तिसगत बात सुन, पवनजयने तुरन्त स्वनाम अंकित मुद्रिका निकाल कर उसके हाथमें रक्खी और कहा— "प्रिये ! किसी तरहकी चिन्ता न करना।

(पृष्ठ २१)

पुत्रकी प्राप्ति होगी। यद्यपि संसारमें इससे बढकर आनन्दका विषय और नहीं है और हमें भी इसके कारण प्रसन्नही हो होना चाहिये, तथापि एक बातके कारण यह विषय मेरे लिये खेद जनक हो पडा है। वह बात यह है, कि बहुत दिनोंसे आपने मेरा त्याग कर रक्खा था। यह बात प्रायः सभीको मालूम है। इस समय आप विदेश गये हुए हैं—यह भी सब कोई जानता है। आपका आजका आगमन और संयोग मेरे और आपके सिवा और कोई नहीं जानता। ऐसी अवस्थामें लोगोंको जब मालूम होगा कि मैं गर्भवती हूँ, तब मुझे इस बातका भय है कि लोग मेरे चरित्र पर संदेह कर मेरी निन्दा करेंगे। इसलिये आप मुझे अपनी कोई ऐसी चीज़ भेट दीजिये, जो आपके चिन्ह-स्वरूप मेरे पास रहे और किसीके पूछनेपर मैं उस चीजको दिखा-कर आपके आगमनकी प्रतीति करा सकूँ।

अञ्जना सुन्दरीकी यह युक्तिसङ्गत बात सुन, पवनंजयने तुरन्त स्वनाम अङ्कित मुद्रिका निकाल कर उसके हाथमें रक्खी और कहा—"प्रिये! किसी तरहकी चिन्ता न करना। मैं शीघ्रही शत्रुओंका संहार कर वापस आऊँगा। तुम्हें छोड़कर जानेकी इच्छा तो नहीं होती, किन्तु क्या करूँ, बिना गये काम नहीं चल सकता। लो, अब मैं जाता हूँ।"

पतिकी यह बात सुन अञ्जना सुन्दरीने उन्हें विदा करते हुए कहा—जाइये नाथ! ईश्वर आपका मङ्गल करे। दासीको न भूलियेगा। विजय प्राप्त कर शीघ्र आइयेगा।

पवनंजयने चलते चलते कहा—"देवि। ऐसा ही होगा। ईश्वर हमारा मनोरथ सिद्ध करेगा। मैं जाता हूँ। तुम आनन्दसे रहना और मेरे लिये सोच न करना। मैं शीघ्रही तुम्हें आ मिलूँगा।"

इसके बाद दोनों एक दूसरेकी ओर प्रेम भरी दृष्टिसे देखते हुए पृथक हुए। उस समयका वह दृश्य दर्शनीय था। उसका वर्णन करना किसी लेखक या कविकी शक्तिके बाहर है। किसी निपुण चित्रकारको भी वह चित्र अङ्कित करनेमें सफलता मिल सकती है या नहीं—यह एक विचारणीय प्रश्न है।

पवनंजय आकाशमार्गसे प्रयाण कर अपने मित्रको जा मिले। उसे पवनंजयने सारा हाल कह सुनाया। सुनकर उसे बडाही आनन्द हुआ। कुछ देरके बाद उन्होंने सैन्यको कूच करनेकी आज्ञा दी और यथा समय लंका पहुँच कर रावणसे भेट की। रावणने उन्हें वरुण पर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी। पवनंजय उसे शिरोधार्य कर शत्रु दलका संहार करनेमें व्यस्त हुये।

वन-वास

कालकी गति बडी विचित्र है। लोग समझते थे कि कल रामचन्द्र युवराज होंगे, परन्तु कालकी कुटिलताके कारण सवेरा होतेही उन्हें जटावल्कल धारणकर वनके लिये प्रस्थान करना पड़ा! सती अञ्जना सुन्दरीके भाग्यमे

भी विधाताने कुछ ऐसाही लिख रक्खा था। महीने दो महीनेके बाद गर्भके कारण ज्योंही शारीरिक परिवर्तन आरम्भ हुए और उसके रूप रङ्गमें अन्तर पड़ने लगा त्योंही चारों ओर उसके सम्बन्धमें कानाफूसी होने लगी। सर्व प्रथम उसकी सखी और दासियोंका ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ और बादको समूचे रनिवासमें यह बात फैल गयी।

पवनजयकी माताको यह हाल सुनकर बड़ाही क्रोध आया। उन्होंने तुरन्त अञ्जना सुन्दरीको बुलाकर फटकार बतायी और पूछा—हे दुराचारिणी! शीघ्र बता कि यह गर्भ किसके समागमसे रहा है? तेरा पति तो विदेश गया हुआ है। जब वह यहाँ रहता था, तब भी तेरा मुँह न देखता था। तू यह पापकी गठरी कहाँसे ले आयी? क्या तू दोनों कुल डुबोना चाहती है? तुझे यह नीच कर्म करते हुए लज्जा न आयी? धिक्कार है तुझे! ऐसा करनेकी अपेक्षा तो चुल्लूभर पानीमे डूब मरना अच्छा था। अभागिनी? कुलटा!"

सासके मुंहसे यह अपशब्द सुन अञ्जना सुन्दरी स्तम्भित हो गयी। उसने नम्रता पूर्वक पवनंजयकी दी हुई वह अँगूठी उनके सम्मुख रख दी और संक्षेपमें उनके आगमनका हाल भी कह सुनाया, परन्तु उसकी यह बात सासके गले न उतरी। उसने शान्त होनेकी अपेक्षा और अधिक क्रोधकर कहा—"दुष्टा! तेरी बातोंसे स्पष्ट मालूम होता है कि तूने अपना मुँह काला किया है। अब मेरे पुत्रकी आड़ क्यों लेती है? उसे नाहक

क्यों बदनाम करती है? अब ऐसी मिथ्या बात मुँहसे निकालेगी, तो तेरी जीभही खिंचवा लूँगी। इस अँगूठीको देखकर कोई धोखेमें नहीं पड़ सकता। मैं मूर्ख नहीं हूँ कि तू जो कहेगी वही मान लूँगी। मेरी उम्र तेरी अपेक्षा बहुत बड़ी है। मैं तुझसे कहीं अधिक बुद्धि और अनुभव रखती हूँ। तू मुझे बच्चोंकी तरह समझाना चाहती है? देख, अभी तेरी क्या गति कराती हूँ!"

इस तरह बकझक कर वे अपने पतिके पास गयी और उन्हें नोन-मिर्च लगाकर सारा हाल कह सुनाया। वे तुरन्त उनकी बातोंमें आ गये और उनके कथनानुसार कार्य करनेको तैयार हो गये। उन्होंने आज्ञा दी कि उस दुष्टाको इसी वक्त रथमें बैठा कर उसके नैहर भेज दो, ताकि उसके माँ बाप भी जान लें कि उनकी लड़कीने किस तरह उनके वंशका नाम उज्ज्वल कर दिया है। इसी समय उसे यहाँसे विदा कर दो। अब उस बलाको एक क्षण भी इस महलमें रखना ठीक नहीं।

इस प्रकार पतिकी सम्मति प्राप्तकर तुरन्त अञ्जना सुन्दरीकी सासने एक सारथीको बुलाया, और उसे अञ्जना सुन्दरीको उसके नैहर छोड़ आनेकी आज्ञा दी। सारथी आदेशानुसार अञ्जनाको रथमें बैठाकर, महेन्द्रपुर लेगया और वहाँ उसके पितासे सारा हाल कह, उसे वहीं छोडकर आदित्य नगर लौट आया।

प्रिय पाठक! सास भी सात माताओंमें एक माता गिनी

गयी है, अत उसे अपनी पुत्रीके समानही पुत्र-वधू परभी स्नेह रखना चाहिये और उसे समय-समय पर हितवचन कहते रहना चाहिये। पुत्रवधूके खानपान और वस्त्राभूषणोंके सम्बन्धमें भी उसे कोई अन्तर न रखना चाहिये। सासका यह भी कर्त्तव्य होना चाहिये कि वह अपनी बहूको ऐसे कायदेके साथ रक्खे, जिसमें देवरानी, जेठानी या ननँद आदिसे झगड़ा न हो और वे सब आपसमें मिलजुल कर रहें। जो सास अपनी बहूके साथ ऐसा आचरण करती है, वही संसारमें धन्यवादके पात्र होती है।

परन्तु आजकलकी सासें ऐसी नहीं होतीं। वे अपने पुत्रको सदैव ऐसा पाठ पढ़ाया करती हैं, जिससे पुत्रवधू और पुत्रमें अनबन बनी रहे और वे आपसमें प्रेम पूर्वक न रहें। बिना दोष या साधारण दोषके लिये पुत्रवधूको दोषी ठहराकर उसकी फजीहत करानेमेंही उन्हें आनन्द आता है। घरमें फलफूल या मेवा मिठाई आती है तो वे उसे बहूसे छिपाकर रखनेमें अपना बड़प्पन समझती हैं। अपनी कन्याके बड़ेसे बड़े दोषोंको छिपाना और पुत्रवधूकी छोटीसे छोटी भूलको तिलका ताड़ बनाकर दिखाना उनका नित्यकर्म हो पड़ता है। उन्हें यह ख्याल नहीं आता कि आज जो हमारी लड़की है और जिसे हम शिर पर चढ़ाती हैं, वह कल किसीकी बहू हो सकती है और उसकी भी किसी दिन वैसीही दुर्गति हो सकती है। उन्हें यह भी विचार नहीं आता कि आज जो हमारी बहू है, वह किसी दिन किसीकी लड़की थी और इसी तरह अपने मां बापको

गोदमें लाड़ प्यारके साथ पली थी। जो लड़की बचपनमें प्यारके साथ पली है, उसे आज इस तरह दुःख देनेसे क्या उसका हृदय टूक-टूक न हो जायगा? जब उनकी लड़कीको उसकी ससुराल वाले दुःख देते हैं, तब वे उन्हें कोसती हैं, परन्तु दूसरेकी लड़कीको बहूके रूपमें पाकर जब वे सास बनती हैं, तब उसे दुःख देनेमें न जाने उन्हें वैसा विचार क्यों नहीं आता? प्यारी बहिनो! यदि तुम्हें कभी सासके पूज्य पदपर अधिष्ठित होनेका सौभाग्य प्राप्त हो तो आजकलकी कर्कशा सासकी तरह अपनी बहूको दु.ख देनेमें सुख न समझना। पुत्री और पुत्रवधूमें कोई अन्तर न रहना चाहिये। दोनोंको समान समझकर समानही व्यवहार करना चाहिये। यदि तुम ऐसा करोगी तो तुम्हारी मृत्युके बाद भी तुम्हारी बहू तुम्हारे लिये आँसू बहायेगी और तुम्हारी सद्गतिके लिये ईश्वरसे प्रार्थना करेगी।

इसी तरह जिन्हें श्वसुर होनेका सौभाग्य प्राप्त हो उन्हें भी अपनी पुत्रवधूपर कन्याके समानही प्रेम रखना चाहिये और उसे सदैव इस तरहकी शिक्षा देनी चाहिए जिससे पुत्र और पुत्रवधूमें दिन पर दिन प्रेम बढ़ता रहें और वे अपनी जीवन यात्रा सुगमता पूर्वक सम्पन्न कर सकें। पत्नीकी बकझक और सच्चीझूठी बातों पर विश्वासकर अकारणही पुत्र किंवा पुत्रवधू पर क्रोध करना या उन दोनोंमें अनबन कराना कदापि उचित नहीं है। इससे अपने बड़प्पनमें बट्टा लगता है और संसारमें निन्दा होती है।

अस्तु। जब अञ्जना सुन्दरी अपने पिताके घर पहुंची, तब

पहले तो उसके माता-पिता उसे देखकर बहुतही प्रसन्न हुए, परन्तु जब उन्होंने सारथी द्वारा उसके गर्भकी रामकहानी सुनी, तब उनके चेहरे पर उदासी छा गयी। अञ्जना सुन्दरीके दुर्भाग्यवश उन्होंनेभी ऐसी कुलकलङ्किनी कन्याको अपने घरमें आश्रय देना उचित न समझा। उन्होंने तुरन्त वसन्ततिलका नामक एक दासीके साथ उसे जङ्गलमें भेज दिया। इस तरह बिचारी अंजना सुन्दरी वनवासिनी हो गयी। भाग्यके रूठनेपर उसके सास ससुर और माता-पिताभी रूठ गये! धन्य प्रारब्ध!

संसारमें सब स्वार्थके सगे होते हैं। स्वार्थको हानि पहुं-नेकी संभावना देखतेही वे सगाईका नाता तोड़कर झट अलग हो जाते हैं। अंजना बिलकुल निरपराधिनी थी, फिर भी केवल लोकनिन्दाके डरसे उसके माता-पिताने उसे अपने महलमें आश्रय न दिया। आश्रय देना तो दूर रहा, उन्होंने उससे सुख दुःखकी बात भी न पूछी। उन्होंने यह भी न सोचा, कि व्याघ्र और सिंह आदिसे भरे हुए जङ्गलमें वह किस तरह रहेगी और कैसे आत्म रक्षा करेगी? किस तरह वह शीत और वर्षा सहेगी और किस तरह जीवन निर्वाह करेगी? उन्होंने केवल यही सोचा कि ऐसी लड़कीका जीनेकी अपेक्षा मर जानाही अच्छा है और इसी लिये उन्होंने उसे मरनेके लिये जङ्गल भेज दिया।

हमारे पाठकोंको इस घटनासे इस बातका अच्छी तरह ज्ञान हो सकता है, "स्वारथके सबही सगे, बिन स्वारथ कोउ नाहि" मनुष्यका जब दुर्दिन आता है, तब उसके शिर पर चारों ओरसे

विपत्तिका पहाड़ टूट पड़ता है। बिचारी अंजना सुन्दरी—घरकी दाधी वन गयी तो वनमें लागी आग। ससुरालमें दुःखकी मारी नैहर आयी, तो वहाँ भी उसे शान्ति न मिल सकी। जब बुरे दिन आते हैं तब ऐसाही होता है। अच्छे दिनोंमें रोज हजारों मित्र मिलने आते हैं, परन्तु बुरे दिनमें कोई विरलाही साथ देता है। संसारमें माता-पितासे बढ़कर और कोई हितैषी नहीं हो सकता, परन्तु अंजना सुन्दरीके विपत्ति-कालमें वे भी हटकर एक किनारे हो गये। संसारमें केवल धर्मही एक ऐसी वस्तु है, जो निःस्वार्थभावसे मनुष्यका साथ देती है और जन्म जन्मान्तर तक उसका बेड़ा पार लगाती है। जो लोग स्वार्थी मनुष्योंसे नाता न जोड़कर धर्मसे नेह लगाते हैं, वे कभी दुःख नहीं पाते। वे जहाँ और जिस अवस्थामें रहते हैं, उसी अवस्थामें धर्म उनकी रक्षा करता है।

अंजना सुन्दरी वनवासिनी हो गयी! उसके दुःखोंका पारावार न रहा। खानेको अन्न और पहरनेको कपड़े न थे। चारों ओर विपत्तिकी काली घटा घिरी हुई दिखाई देती थी। परन्तु वह इन दुःखोंसे विचलित होनेवाली न थी। वह जानती थी कि ऐसेही समय मनुष्यकी परीक्षा हुआ करती है। उसने निश्चय किया कि जब तक प्राण रहेगा तब तक इसी वनमें रहूँगी और अपने सतीत्वकी रक्षा करूँगी। क्या कभी भगवान् प्रसन्न ही न होंगे? क्या अशरण शरण दीनबन्धु मेरी सुधि न लेंगे! क्या मेरे इन दुर्दिनोंका अन्त न आयेगा!

अंजना सुन्दरीने यह विचारकर एक गिरिकन्दराको अपना निवास स्थान बनाया। एक दिन कहींसे विचरण करते हुए एक तपस्वी उधरसे जा निकले। उन्हें देखतेही अंजना सुन्दरीने उन्हें प्रणाम किया और बड़े आनन्दसे उन्हें आसन दे बैठाया। तपस्वीने अंजना सुन्दरीकी उत्कण्ठा और भक्ति देखकर उसे धर्मोपदेश दिया। अंजना सुन्दरीने बड़े ध्यानसे उसे सुना और अपने हृदयमें धारण किया।

तपस्वीको परम ज्ञानी और धर्मनिष्ठ देखकर उनसे वसन्त-तिलकाने कहा,—"भगवन्! यह अंजना सुन्दरी तो परम धर्मिष्ट और साध्वी सती है। इस जन्ममें इसने एकभी दुष्कर्म नहीं किया, फिर भी इसे यह विपत्तियाँ क्यों सहन करनी पड़ती हैं? क्या यह किसी पूर्वजन्मके दुष्कर्मका फल है?

दासीकी यह बात सुन तपस्वीने ज्ञानदृष्टिसे विचार कर कहा—किसी समय एक शहरमें कनकरथ नामक राजा रहता था। उसके लक्ष्मीवती और कनकोदरी नामक दो रानियाँ थीं। इनमेंसे लक्ष्मीवती वितरागदेवकी परम भक्त थी। एक दिन लक्ष्मीवतीने भगवन्तकी पूजा कर मूर्त्तिको सिंहासन पर स्थापित किया और अपने गृहकार्यमें मन लगाया। कनकोदरीने ईर्षाके कारण वह प्रतिमा चुरा ली। दूसरे दिन जब पूजाका समय हुआ, तब लक्ष्मीवतीने बड़ी खोज की परन्तु प्रतिमाका पता न चला। इससे उसे बड़ाही दुःख हुआ परन्तु लाचार, क्या करती? शिर पीट कर बैठ रही।

कुछ दिनोंके बाद कनकोदरीने किसी साध्वी द्वारा सुना कि इस तरह प्रतिमा चुरानेसे बड़ा पाप लगता है और मनुष्य अनन्त दुःखका भागी होता है। इससे उसने भयभीन होकर चुपचाप वह प्रतिमा उसी सिंहासन पर रख दी। उधर आते जाते जब लक्ष्मीवतीकी उसपर नज़र पड़ी, तब उसे असीम आनन्द हुआ और वह पूर्ववत् पूजादि नियममें मग्न रहने लगी।" स्त्रियोंको अपनी सौतसे कितना द्वेष होता है—यह इस घटनासे जाना जा सकता है। वे उसे कहती तो हैं बहिन, परन्तु मनमें उसे दुश्मनसेभी बढ़कर समझती हैं। येनकेन प्रकारेण सौतको कष्ट देना और उसका जी जलाना—यही वे अपना कर्त्तव्य समझती हैं,—अस्तु।

उस तपस्वीने यह कथा सुनाकर वसन्ततिलकासे कहा—कनकोदरीको धर्मका बोध होने पर वह जैनधर्मकी आराधक हुई और मृत्युके बाद उसे स्वर्गलोककी प्राप्ति हुई। वहींसे च्यवन होकर वह इस अंजना सुन्दरीके रूपमें उत्पन्न हुई, और जिन प्रतिमा छिपानेके पापका इस तरह फल भोग रही है। परन्तु अब इसके वह कर्म पूर्ण होनेमें अधिक देर नहीं है। अब इसे सदैव पुण्य कार्यमें लगे रहना चाहिये जिससे सुख मिलनेमें विलम्ब न हो। इसके उदरमें देवलोकसे एक देवने च्यवन होकर निवास किया है। यथा समय वह पुत्र रूपसे उत्पन्न होगा। वह बड़ा पराक्रमी और स्वामिभक्त होगा और इसी जन्ममें मोक्ष प्राप्त करेगा।"

यह सब बतलाकर वे मुनीश्वर वहाँसे चले गये और अंजना-सुन्दरी उस दासीके साथ उसी कन्दरामें पूर्ववत् दिन बिताने लगी। जब दोसौ साढ़े सततर दिनका गर्भकाल पूरा हुआ तब उसने एक पुत्र-रत्नको जन्म दिया। उस समय प्रसवके लिये वहाँ किसी प्रकारकी सुविधा न देख अंजना सुन्दरीको बड़ा दुःख हुआ। उसके नेत्रोंमें जल भर आया और वह रोने लगी। कहने लगी—हा देव! एक विद्याधर कुमारकी पत्नी और ऐश्वर्यशालिनी होते हुए भी आज मुझे यह दिन देखना पड़ा कि मैं एक निराधारकी तरह गिरि-कन्दरामें पड़ी हुई हूँ। हाय! मेरे यह पाप न जाने कब पूरे होंगे। दैवने चारों ओरसे मेरे शिर पर विपत्तिके पहाड़ ढहा दिये हैं। हे दुर्दैव! अबतो इस अभागिनी पर कृपा कर! देख, मैं सुखशैय्याके बदले पर्ण-शय्या पर पड़ी हुई हूँ। प्रसूता होने परभी यही वनफल और कन्द मूल मेरेलिये पथ्य हो रहे हैं। हे भगवन्! अब यह जीवन मुझे भार हो पड़ा है। क्या करूँ? कहाँ जाऊँ? चारों ओर अन्धकारही अन्धकार दिखायी देता है।

इस तरह उस कन्दरामें पड़ी हुई अंजना सुन्दरी विलाप कर रही थी। दैवयोगसे उसी समय उधरसे प्रतिसूर्य नामक एक विद्याधर आ निकला। सतीके दुःखके कारण उसका विमान रुक गया। प्रतिसूर्यने विमानसे उतर कर देखा तो उसे एक अबलाकी रुदनध्वनि सुनायी पड़ी। जिधरसे वह ध्वनि आ रही थी, उधरको चलते-चलते वह उस कन्दराके द्वार पर

पहुँचा। वहाँ पहुँचने पर उसे विश्वास हो, गया कि इसीके अन्दर कोई करुण क्रन्दन कर रहा है। उसने वहींसे खड़े होकर पूछा—"बहिन! तू क्यों रोती है।"

यह सान्त्वना पूर्ण विनीत शब्द सुनकर अंजनाने उसे अपना सारा हाल कह सुनाया। प्रतिसूर्यका हृदय उसकी करुणकथा सुनकर द्रवित हो उठा। उसने अंजना सुन्दरीको विश्वास दिलाया कि मैं तुम्हें अपनी बहिनके समान रक्खूँगा। तुम मेरे घर चलो और आनन्दसे रहो।

अंजना सुन्दरीने भी प्रतिसूर्यकी दयालुता, बोलचाल, हाव-भाव और चेहरा देखकर इस बातका विश्वास कर लिया कि वह वास्तवमें सज्जन पुरुष है। उस समय उसे किसीके प्रश्रयकी बड़ी आवश्यकता थी, अत. प्रतिसूर्यके आग्रह करने पर उसने उसके घर जाना स्वीकार कर लिया।

प्रतिसूर्यने अंजना सुन्दरी और उसके नवजातशिशु एवं दासी वसन्ततिलकाको अपने विमानपर बैठाकर निवास स्थानकी ओर प्रस्थान किया। अंजना सुन्दरीकी अवस्था उस समय अच्छी न थी। प्रसव एवं चिन्ताके कारण उसका शरीर क्षीण और चित्त भ्रमितसा हो रहा था। फलत कुछ दूर चलनेके बाद उसका बच्चा उसके हाथसे छूटकर एक पर्वतके शिखर पर गिर पड़ा; परन्तु इससे उस बच्चेको चोट न लगकर उलटा उसकी चोटसे वह शिखर टूटकर चूर-चूर हो गया।

अञ्जना सुन्दरीने यह हाल अपनी आँखसे देखा; किन्तु फिर
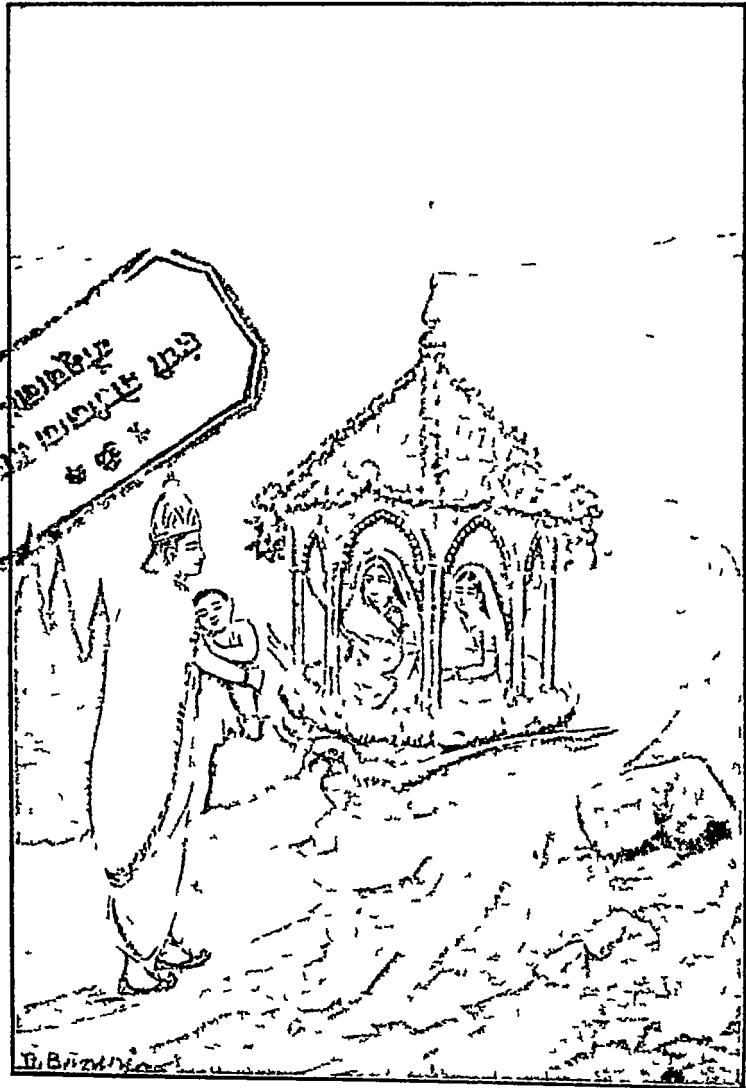
मेरे इस भानजेने शिखरको तोड़-फोड़कर चूर-चूर कर डाला है। यह बड़ा पराक्रमी होगा। ईश्वर इसे चिरजीव रक्खे।" पृष्ठ ३२

भी पुत्रका मोह कर वे रोने लगीं। प्रतिसूर्यने तुरन्त विमानको लौटाया और बच्चेको लाकर अंजना सुन्दरीके हाथमें रखते हुए कहा—मेरे इस भानजेने शिखरको तोड़-फोडकर चूर-चूर कर डाला है। यह बड़ा पराक्रमी होगा! ईश्वर इसे चिरञ्जीव रक्खे!"

"इस तरह उस बच्चेके असीम बलका विचार करता हुआ प्रतिसूर्य अपने निवासस्थान हनुरुह नगरीमें जा पहुँचा। वहाँ उसने अपनी इस धर्म भगिनीके लिये खाने पीने और रहने आदि का समुचित प्रबन्ध कर दिया। अंजना सुन्दरीको उसके प्रबन्धसे बडा सन्तोष हुआ। वह इस तरह वहाँ रहने लगी, मानो अपनेही घरमें रहती है। प्रतिसूर्य उसके आरामके लिये सदैव चिन्तित रहता था। हनुरुहमें पालित होनेके कारण अंजना सुन्द-रीके पुत्रका नाम उसने हनुमान रक्खा। हनुमान और अञ्जना सुन्दरी बड़े आनन्दसे अपने इस आश्रयदाताके यहाँ रहने लगे।

पुनर्मिलन

उधर पवनंजयने वरुणको परास्त कर रावणसे विदा माँगी और अपने नगरकी ओर प्रस्थान किया। नगरमें पहुँच कर पहले वे अपने माता-पिताके पास गये और उनके चर-णोंमें प्रणाम कर अपना कुशल समाचार कह सुनाया। इसके बाद वे उत्कण्ठा पूर्वक अञ्जनासुन्दरीसे मिलनेके लिये अपने मह-

लमें गये; परन्तु वहाँ अंजना सुन्दरी कहा ? पक्षी रहित पिंजरेको तरह उस महलको सूना देखकर पवनंजय चिन्तित हो उठे । और दासदासियोंसे अपनी प्रियतमाका हाल पूछने लगे ।

पवनंजयको जब यह मालूम हुआ कि अंजना सुन्दरीके चरित्र पर संदेह कर उनके माता-पिताने उसे उसके नैहर भेज दिया है, तब वे बहुतही दुखित हुए और उसी क्षण अपनी ससुरालके लिये चल पड़े । अंजनाकी लाञ्छित और अपमानित अवस्थाका स्मरण कर उनका हृदय विदीर्ण हुआ जाता था । उन्होंने ससुराल जाकर अंजनाको गले लगा, उसका सारा दुःख दूर करनेका विचार कर रक्खा था, परन्तु जब ससुराल पहुंचे तब उन्हें मालूम हुआ, कि उस निरपराधिनीको उन्होंने वन भेज दिया था ।

पवनंजय यह समाचार सुन हताश हो गये और उन्मत्तकी भाँति अंजना सुन्दरीकी खोजमें वन-वन भटकने लगे । परन्तु बहुत खोज करने पर भी जब अंजना सुन्दरीका पता न चला, तब वे व्याकुल हो अपने घर लौट आये ।

पवनंजयको उदास रहते देख एक दिन उनके मित्रने उनका आन्तरिक भाव जाननेके लिये कहा—भाई ! यदि स्त्रीका पता नहीं मिलता, तो इस तरह उदास क्यों होना चाहिये । तुमने बहुत खोज की, पता लगानेके लिये बड़ा यत्न किया । किन्तु अब उसके पीछे 'परेशान होना व्यर्थ है । अगर जिन्दगी बनी है तो अनेक स्त्रियाँ मिल जायँगी । तुम्हारे एक-एक बाल तकका

विवाह हो जायगा। उसके भाग्यमें जो बदा थो, वह हुआ। अब तुम उसकी आशा छोड़ दो। मैं शीघ्रही तुम्हारे लिये उपयुक्त पती खोजकर तुम्हारा व्याह करा दूँगा।"

मित्रकी यह बात सुन पवनंजयने कहा—मित्र! तुम्हारा कहना यथार्थ है। गत वस्तुके लिये शोक न करना चाहिये ; परन्तु मेरी धारणा कुछ औरही है। जो लोग स्त्रियोंका मूल्य नहीं समझते और यह कहते हैं, कि जिन्दगी बनी है तो हजार व्याह हो जायँगे, मैं उन्हें घृणाकी दृष्टिसे देखता हूं। स्त्री, पुरुषकी अर्धाङ्गिनी है। अर्ध अङ्गका नाश हो जानेपर पुरुष कैसे जीवित रह सकता है? जो पुरुषके सुखदुखमें बराबर भाग लेती है, आवश्यकता पडने पर मन्त्रीकी तरह सलाह देती है और सदैव दासीकी तरह सेवा करनेको तैयार रहती है, उसके बिना गृह-राज्यका राजतन्त्र सुचारुरूपसे कैसे चल सकता है? मैंने तो प्रतिज्ञा की है, कि मेरी अंजना यदि मुझे न मिलेगी तो मैं उसकी वियोगाग्निमें अपने प्राण तककी आहुति दे दूँगा। पहले जो हो चुका, वह हो चुका। उस समय मुझे अपने कर्त्तव्य और अपने दायित्वका ज्ञान न था। उस समय उस हीरेको पहचाननेको मुझमें शक्ति न थी, किन्तु अब मैं सब जानता और समझता हूँ। मैं दूसरा व्याह नहीं करना चाहता। वह मेरी अर्द्धाङ्गनी नहीं, किन्तु पूर्णाङ्गिनी थी। वह मेरी दासी न थी, किन्तु मेरे देह-गेहकी स्वामिनी थी। वह मेरे मन-मन्दिरको अपने दिव्य आलोकसे आलोकित करनेवाली प्रेम-प्रतिमा थी।

विना उसके मेरा जीवन मुझे भार मालूम होता है। मैं जो कहता हूँ वह बिलकुल ठीक ही कहता हूँ। इसमें लेश मात्रभी अत्युक्ति नहीं है। यदि मुझे वह देवी न मिलेगी, तो निःसन्देह मैं अपना प्राण त्याग दूँगा।"

पवनंजयकी यह दृढ धारणा देख, उन्हें सान्त्वना दे वह मित्र उनके पिताके पास गया और उनसे पवनंजयकी दृढ़प्रतिज्ञाका हाल कह सुनाया। उसने कहा—"राजन्! यदि पुत्रका मोह हो तो शीघ्रही कोई उपाय करिये, अन्यथा युवराज अवश्य प्राण त्याग देंगे।

पवनंजयकी प्रतिज्ञाका हाल सुनकर प्रह्लादराजाको अपनी अविचारिताके लिये बड़ा पश्चाताप हुआ। वे अपने मनमें कहने लगे, कि स्त्रियोंकी वात सुनकर इस तरह विना विचारे कोईभी कार्य न कर बैठना चाहिये। करनेसे निःसन्देह इसी तरह पश्चाताप करना पड़ता है। इसके बाद उन्होंने अनेक विद्याधरोंको अंजना सुन्दरीकी खोजके लिये भेजा और स्वयंभी वाहर निकले, परन्तु वहुत कुछ खोजने परभी उसका कहीं पता न चला।

अब पवनंजयकी बची-खुची आशा भी निराशाके रूपमें परिणत हो गयी, उन्होंने एक चिताकी रचना कर उसमें जल मरनेकी तैयारी की। यह देख उनके पिताने कहा—वत्स! यह तू क्या कर रहा है? तेरे जैसे चतुरको यह नादानी शोभा नहीं देती। प्राण त्याग करनेसे स्त्री थोड़ेही मिल जायगी। वलिक इस तरह करनेसे तो आर्त्तध्यानकी वृद्धि होकर दुर्गति होती है।

जैनागमोंमें लिखा है कि आत्मघात करनेवाला मनुष्य यदि शुभ भावनासे मरता है तो उसे व्यन्तरकी गति प्राप्त होती है और नीच भावनासे मरता है तो उसकी अधोगति होती है। इसलिये अमूल्य शरीरकी आहुति दे अपनी सद्गतिका नाश न कर। ऐसे समय धैर्य्यसे काम लेना चाहिये। जब तक श्वास तब तक आश। संभव है कि अब तक अंजना सुन्दरी जीवित हो और खोज करने पर कहीं न कहीं मिल जाय।"

जिस समय प्रह्लाद अपने पुत्रको इस तरह सान्त्वना दे रहे थे, उसी समय दैवयोगसे प्रतिसूर्य विद्याधर अंजनासुन्दरीके साथ वहाँ आ पहुँचा। उन्हें देखतेही सबका शोक दूर हो गया और चारों ओर आनन्द मनाया जाने लगा। अंजनासुन्दरी और पवनंजय बड़े प्रेमसे एक दूसरेको मिले। अंजना सुन्दरीने रो-रोकर पवनंजयके चरण भिगो दिये और पवनंजयने बारंबार उसे गलेसे लगाकर अपना हृदय शीतल किया। उस समय उन दोनोंका हृदय जो आनन्द अनुभव कर रहा था, वह भुक्त भोगीही समझ सकता है। उसे अंकित करना किसी जड़ लेखनीका काम नहीं।

प्रतिसूर्यको पवनंजय और उनके पिताने अनेकानेक धन्यवाद दिये और कई दिनों तक अपने महलमें रखकर उनकी अभ्यर्थना की। चलते समय प्रतिसूर्यने राजा प्रह्लाद और पवनंजय आदिसे हनुरुह नगरीको चलनेका आग्रह किया। पवनंजय और उनके पिताने प्रतिसूर्यकी बात मान ली। वे अंजना सुन्दरी

सहित उसके साथ हनुरुह गये। वहाँ उन्होंने हनुमानको देखा ? अपने पौत्रका मुँह देखकर प्रहलादको वड़ाही आनन्द हुआ। वे कई दिनों तक प्रतिसूर्यके यहाँ रहे और उसका आतिथ्य ग्रहण करते रहे, कई दिनोंके वाद उन्होंने प्रतिसूर्यसे विदा माँगी। प्रतिसूर्यने प्रहलाद तथा अन्यान्य विद्याधरोंको वडे स्नेहसे विदा किया। सब लोग एक दूसरेसे मिल भेटकर अपने निवास स्थानको लौट आये। पवनंजय, अञ्जना और हनुमान को प्रतिसूर्यने न भेजा ! प्रह्-लादने भी उसके उपकारोंको ध्यानमें ले, उन्हें वहीं रहने दिया।

जब हनुमान बडे हुए तब प्रतिसूर्यने उन्हें नाना प्रकारकी सिद्ध विद्यायें सिखाकर एक उत्तम विद्याधर वना दिया। कुछ दिनोंके बाद पवनंजयने अपने माता पिताके पास जानेकी इच्छा प्रकट की, इतनेही में फिर वरुण और रावणमें किसी कारण वश युद्ध छिड़ गया। इस वार हनुमान अपने पिता और प्रति-सूर्यकी आज्ञा प्राप्त कर रणभूमिमें गये और वरुणको पराजित कर अपने अतुल पराक्रमका परिचय दिया। उनकी वीरता देखकर रावणको बड़ा आनन्द हुआ। उसने मुक्तकण्ठसे उनकी प्रशंसा कर उन्हें अपने हाथसे उत्तम सुप्रसाद दे विदा किया।

हनुमानने युद्धक्षेत्रसे लौटकर अपने माता पिता और मामाको प्रणाम किया। प्रतिसूर्यने उन्हें आशीर्वाद दे, नाना प्रकारके प्रोत्साहन द्वारा उत्साहित किया और पिताने भी उनकी प्रशंसा की। कुछ दिनोंके वाद पवनंजयने प्रतिसूर्यसे फिर अपने माता-पिताके पास जानेकी आज्ञा माँगी। प्रतिसूर्यने आग्रह कर और

भी कई दिन तक उन्हें अपने यहाँ रक्खा और फिर उन्हें सानन्द विदा किया। पवनंजय अपनी प्रियपत्नी अंजना सुन्दरी और परम-प्रतापी पुत्र हनुमानको साथ ले अपने निवासस्थानको लौट आये।

अञ्जना सुन्दरीकी सास और श्वसुर अंजना सुन्दरी और पवनजयको देख बहुतही प्रसन्न हुए और अपने पूर्वकृत्योंके लिये पश्चाताप करते हुए कहने लगे—हमारी अज्ञताके कारण तुम्हें न जाने कितने कष्ट सहने पड़े! इस बातके लिये हमें बड़ा दुःख है। बहूकी बात न मानकर हमने उसे जो कष्ट दिये उसके लिये हमें बड़ा सन्ताप हो रहा है, परन्तु जो हो चुका वह हो चुका। तुम दोनों बड़ेही लायक और सपूत हो इसलिये हमें आशा है कि उन बातोंको भूल जाओगे। तुमसे यह बात कहनेकी भी आवश्यकता न थी, परन्तु शायद तुम्हारे मनमें कोई बात लग गई हो तो उसे निकाल देनेके लियेही ऐसा कर रहे हैं। ईश्वर करे तुम्हारे समान पुत्र और पुत्र-वधू सबको मिलें।

राजा और रानीकी यह बात सुन पवनंजय और अंजना-सुन्दरीने उनके चरणोंमें प्रणाम कर नम्रता पूर्वक कहा—हमें आपकी ओरसे किञ्चित् भी दुःख नहीं मिला। और यदि कुछ मिला है तो उससे हमारे यशमें वृद्धिही हुई है। इस तरह वह दुःख भी हमारे लिये सुखका कारणही सिद्ध हुआ है। यदि आप लोग ऐसा न करते तो हमें कसौटी पर चढ़ने का अवसर न मिलता और बिना कसौटी हुए संसारमें हमारा मूल्य न बढ़ता, इसलिये आपने सब प्रकारसे हमारा कल्याणही किया।

है। यदि हम आपके इस उपकारको भूल जायँ तो हमारे समान कृतघ्नी और कौन हो सकता है? आप लोग हमारी ओरसे निश्चिन्त रहें। हम सदा तनमन और वचनसे आपकी सेवा करेंगे। यदि हमारी कोई भूल हुई हो, हम लोगोंने अज्ञतावश कुछ अविवेक किया हो तो उसके लिये क्षमा करें। हम आपके दासानुदास हैं।"

पुत्र और पुत्रवधूकी यह बात सुन पवनंजयके माता पिताको बड़ा आनन्द हुआ और उन्होंने बारम्बार उन दोनोंके शिर पर हाथ रख उन्हें आशीर्वाद दिया।

प्रिय पाठक! पवनंजय और अंजना सुन्दरीको राजा रानी की अज्ञताके कारण न जाने कितने कष्ट सहन करने पड़े। वन-वन भटकना पड़ा, घर-घरकी खाक छाननी पड़ी, फिरभी उन्होंने उनके अवगुणोंकी उपेक्षा कर केवल उनके गुणों परही ध्यान दिया। उनके अपकारकोभी उपकार समझा और उनके प्रति कृतज्ञता सूचित की। उसी तरह राजा प्रहलाद और उनकी रानीको जब अपनी भूल मालूम हुई, तब उन्होंने निःसङ्कोचभावसे उसे स्वीकार किया और अपने पड़प्पनके अभिमानको छोड़कर उसके लिये खेद प्रकाशित किया। यह कितने खेदकी बात है कि आजकल न ऐसे सासही ससुर दिखाई देते हैं, न ऐसे पुत्र और पुत्रवधूही दिखाई देती हैं।

आजकलकी पुत्रवधुयें प्रायः ऐसी होती हैं, जो सास ससुरको बेतरह दबाया करती हैं। वे उन्हें अपमान जनक बातें

सुनाती हैं और उन्हें पेट भर खानेको भी नहीं देतीं। देवर, जेठ, ननँद, भौजाई और घरमें जो मनुष्य होते हैं, वे उन्हें फूटीआँखोंभी देखना नहीं चाहतीं। यदि सास ससुर या स्वयं पति कभी भूलकर भी उन्हें किसी प्रकारका कष्ट देता है, तो वे आजन्म उसे याद रखती हैं और उसका बदला लेनेकी चेष्टा किया करती हैं। बलिहारी है इस कलियुगकी !

प्राचीन कालमें, जब यहाँ सभ्यताका महारोग न फैला था, उस समय भारतवासियोंकी अवस्था आजसे सौगुनी अच्छी थी। उस समय जिस प्रेमके साथ लोगोंका नाता निवह जाता था, वह हम लोगोंके लिये इस समय दुर्लभ हो रहा है। उन दिनों जैसे माता पिता होते थे, वैसीही उनको सन्तान होती थी। इसीलिये उन दिनों पृथ्वी नर-रत्नोंका भण्डार हो रही थी। देखिये, पवनंजय और हनुमान कैसे पराक्रमी, सदाचारी, स्वामिभक्त और सद्गुणी थे ? रामायण आजभी इन सब बातोंका प्रमाण दे रही है। यद्यपि हनुमान रावणके परममित्र और अनुग्रह पात्र थे, फिरभी सीताहरणके समय जब उन्होंने देखा कि वह अनीति कर रहा है, तब उन्होंने उसका पक्ष छोड़ दिया और न्यायी रामचन्द्रका पक्ष ग्रहण कर उन्होंने आजीवन उनकी सेवा की।

जिस समय रामचन्द्रकी सेवामें उपस्थित हुए उस समय उन्होंने जो वचन कहे थे, वह स्मरण रखने योग्य हैं। उन्होंने कहा था—हे देव ! क्या आज्ञा है ? यदि आप कहेंतो रावणकी

लंकाकोही जड़ मूलसे यहाँ उठा लाऊँ, यदि आज्ञा हो तो जम्बू-द्वीपको ले आऊँ, यदि आप कहे तो सारा समुद्र पीजाऊँ, कहिये तो विन्ध्याचल पर्वत और सुमेरु गिरिको उठाकर समुद्रमें फेक दूँ, कहिये तो महासागरको बाँध लूँ और कहिये तो पातालसे अमृत ले आऊँ!"

कैसे ओजपूर्ण वीरतासे भरे हुए शब्द हैं ? हनुमानके यह शब्द सुनतेही रामचन्द्रने उन्हें सीनाका पता लगानेकी आज्ञा दी थी और हनुमानने न केवल पताही लगाया; बल्कि रावणका मद उतार डाला। कहनेका तात्पर्य यह है कि माता पिता सदाचारी, सद्गुणी और धीर-वीर होते हैं, तो उनकी सन्तान भी वैसीही होती है। इस लिये माता पिताओंको चाहिये कि वे अपनी सन्तानकी भलाईके लिये सदाचारका पालन करें। दुर्गुणोंसे दूर रहें और अपने अन्तः करणको शुद्ध बनावें। इससे उनका और उनकी सन्तान-दोनोंका कल्याण होता है।

अपने पिताके बाद पहले बहुत दिनों तक पवनंजयने उनके राजसिंहासनको अलंकृत किया और बादको समूचा राज्यभार हनुमानको सौंपकर उन्होंने दीक्षा अंगीकार कर ली। पतिको दीक्षा लेते देख अंजना सुन्दरीने भी संसारका त्यागकर चन्द्र-सूरि गुरुके निकट दीक्षा ले ली। इसके बाद उन दोनोंने दुष्कर जप तप और संयमके आराधन द्वारा कर्मका क्षयकर केवलज्ञानको प्राप्त किया और फिर वे आयु पूर्ण होनेपर अनन्त अक्षय अव्याबाध मोक्ष सुखके अधिकारी हुए। धन्य है ऐसे धर्मनिष्ठ दम्पतिको !

इसी तरह हनुमानने भी न्याय और नीतिपूर्वक दीर्घकाल पर्यन्त राज किया और जब वृद्ध हुए तब अपने पुत्रको राज सौंप कर श्रीदेवसूरिके निकट महाव्रत अंगीकार किया। उन्होंनेभी अपने माता पिताके समान दीर्घकाल पर्यन्त कठिन तपश्चर्या कर शत्रुञ्जय तीर्थमें केवलज्ञानकी प्राप्तिकर अन्तमें मोक्ष प्राप्त किया।

प्रिय जैन बान्धव और बहिनो! इस अंजना सुन्दरीकी कथासेभी हम लोग बहुत कुछ शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। जिस तरह अंजना सुन्दरीने शिरपर विपत्तिका पहाड़ टूट पडने परभी अपने सतीत्वकी रक्षा कर महासतीका पद प्राप्त किया, उसी तरह यदि तुमभी अपने पातिव्रतकी रक्षा करोगी, तो तुम्हारे सभी संकट दूर हो जायँगे और जन्मजन्मान्तरमें भी तुम्हें सुख और ऐश्वर्यकी प्राप्ति होगी।

इसके अतिरिक्त पिता अपने पुत्रऋणसे कब और किस तरह मुक्त होता है? पुत्रको कैसी शिक्षा देनी चाहिये? कैसी शिक्षासे कौन लाभ या हानि होती है? पुत्र या पुत्रीका विवाह कब करना चाहिये? छोटी अवस्थामे व्याह करनेसे क्या हानि होती है? बड़ी अवस्थामें व्याह करनेसे क्या लाभ होता है? कुलवती स्त्रियोंको अपना आचरण कैसा रखना चाहिये? माता पिताके प्रति पुत्रका कर्त्तव्य, बात फूट जानेसे हानि, पाणिग्रहण और व्याहका उद्देश्य, मित्रका कर्त्तव्य, स्त्रियोंका कर्त्तव्य, स्त्रियोको हितशिक्षा, ऋतुमती और पुत्रवती होनेका कारण, सासका कर्त्तव्य, आजकलकी सासको उपदेश, पतिका कर्त्तव्य, प्रेम और

अर्द्धाङ्गिनीकी व्याख्या, आत्महत्या करनेसे हानि, गुरुजनोंके प्रति पुत्र और पुत्रवधूका कर्त्तव्य, भूल होनेपर बड़ोंका खेद प्रकाश आदि अनेक बातें इस कथामें प्रसंगानुसार अंकित की गयी हैं। आत्मकल्याणकी अभिलाषा रखने वाले पाठक और पाठिकायें इनका मनन कर अपना हित साधन कर सकते हैं। धन्य है सतीशिरोमणि अंजना सुन्दरीको, जिसके जीवनसे पद पद पर पवित्रता, सहनशीलता,, धैर्य्य, शान्ति और प्रेम आदि दिव्य--गुणोंकी हमें शिक्षा मिलती है।

रत्नसार कुमार

आपने आजतक अनेक महापुरुषोंके चरित्र पढ़े सुनें होंगे किन्तु कुमार रत्नसारके चरित्रके समान आदर्श और शिक्षाप्रद चरित्र कहीं नहीं पढ़ा सुना होगा। यह चरित्र अनोखे ढँगपर और अपूर्व घटनाओंसे घटितकर लिखा गया है, जिसकी आदर्श एवं आनन्ददायिनी घटनाओंको पढ़कर आपको अपूर्व आनन्द अनुभव होगा। हम दावेके साथ कहते हैं, कि इस पुस्तकको पढ़कर आपको अत्यन्त प्रसन्नता होगी।

ख़ासकर यह चरित्र व्रत पालन करनेके विषयपर लिखा गया है, नियम लेकर उसे किस प्रकार पालन करना चाहिये। इस बातकी शिक्षा इस चरित्रके पढ़नेसे खूबही अच्छी तरह मालूम हो जाती है। कुमार रत्नसारने "परिग्रह प्रमाण व्रत" लेकर उसे किस प्रकार पूरा किया है। यह बात खूबही पढ़ने और मनन करने योग्य है। एक प्रति मँगवाकर अवश्य पढ़िये। मूल्य केवल ॥)

पता—पण्डित काशीनाथ जैन।

२०१ हरिसन रोड कलकत्ता।